315hi20

20

राष्ट्रवाद

हम सभी को अपने जीवन में कभी–न–कभी अपने देश के प्रति ईमानदार होना पड़ता है। अपने देश के प्रति वफादारी को आम तौर पर राष्ट्रीयता की भावना के रुप में समझा जाता है। राष्ट्रवादी व्यक्ति वही है, जो अपने देश से प्यार करता है। इस प्रकार के कथन आपको उपन्यासों और कविताओं, भाषणों और समाचार–पत्रों और फिल्मों में भी मिल सकते हैं।

क्या आपको कभी हैरानी नहीं होती कि यह सब कब शुरु हुआ होगा? राष्ट्रीयता की भावना का इतिहास क्या है? यह विचार कितना पुराना है? अथवा क्या लोग हमेशा ही अपने देश से प्यार करते रहे हैं? क्या 'राष्ट्रीयता' शब्द का अर्थ अपने देश के प्रति वफादारी अनुभव करने के अतिरिक्त कुछ और भी है? इस पाठ में हम इन सभी प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप:

- राष्ट्रीयता के विचार के इतिहास की जड़ें ढूंढ सकेंगे;
- यूरोप में राष्ट्रीयता की भावना के उत्थान के कारणों की व्याख्या कर सकेंगे;
- भारत में राष्ट्रीयता की भावना के विकास को ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष के साथ संबद्ध कर सकेंगे;
- भारत के सांस्कृतिक क्षेत्र में राष्ट्रीयता के विचार के उद्भव की जड़ें ढूंढ सकेंगे और
- राष्ट्रीयता की भावना को आर्थिक संदर्भ में कैसे अभिव्यक्त किया गया है, इसकी व्याख्या कर सकेंगे।

आपकी टिप्पणियाँ

20.1 राष्ट्रीयता की भावना : उद्भव और अर्थ

आपको यह जानकार आश्चर्य होगा कि इस विचार का इतिहास दो सौ वर्ष से ज्यादा पुराना नहीं है। आज 'राष्ट्रीयता की भावना' शब्द का हम जिस अर्थ में प्रयोग करते हैं, उस अर्थ का 19वीं सदी से पहले भारत में कोई अस्तित्व नहीं था। आपको यह जानकर भी आश्चर्य होगा कि इस विचार की जड़ें भारत के इतिहास में नहीं, बल्कि आधुनिक यूरोप के इतिहास में हैं। असल में हम भारतीय राष्ट्रीयता के संबंध में इसके यूरोपीय समकक्ष अर्थों से नितान्त भिन्न अर्थों में संभावना होने की बात कर सकते हैं। इस भिन्नता को जानने के लिए महत्त्वपूर्ण है कि हमें इस बात की जानकारी हो कि यूरोप में किन परिस्थितियों के कारण राष्ट्रीयता की भावना पैदा हुई।

यूरोप में राष्ट्रीयता की भावना का विकास, 18वीं सदी के आसपास समाज और अर्थव्यवस्था में वहां हो रहे मूलभूत परिवर्तनों के परिणामस्वरुप हुआ। औद्योगिक क्रांति शुरु होने से बहुत–सी वस्तुओं और सामग्री का उत्पादन हुआ, जिसकी वजह से इतनी अभूतपूर्व धन–सम्पदा वहां आई, जैसी पहले कभी भी नहीं थी। इसके परिणामस्वरुप ऐसी जरुरत महसूस की गई कि एक ऐसा एकीकृत और विशाल बाजार बनाया जाए, जहां इन चीजों को बेचा जा सके। विशाल बाजार बनाने के लिए गांवों, जिलों और प्रांतों को राजनीतिक रुप से जोड़कर बड़े राज्य का रुप दिया गया। इस विशाल और संयुक्त बाजार में विभिन्न भूमिकाएं निभाने के लिए अलग–अलग प्रकार के लोगों की जरुरत थी, जिसके लिए उन्हें विभिन्न प्रकार के कौशल पूर्ण कार्य में प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक था। परन्तु इन सबसे ऊपर उन्हें आपस में परस्पर संवाद–संचार की आवश्यकता थी। इसी कारण से एक भाषा पर केंद्रित समान शैक्षिक केंद्रों की आवश्यकता महसूस हुई। पूर्व–आधुनिक काल में अधिकांश लोगों ने अपने स्थानीय वातावरण में भाषा और अन्य हुनर सीखे, जो एक–दूसरे से भिन्न थे। परन्तु अब आधुनिक अर्थव्यवस्था के कारण नए परिवर्तनों के परिणामस्वरुप प्रशिक्षण और स्कूलों की एक समान नई प्रणाली अस्तित्व में आई। इस प्रकार इंग्लैंड में अंग्रेजी भाषा, फ्रांस में फ्रांसीसी और जर्मनी में जर्मन भाषा इन देशों की प्रमुख भाषा बन गई।

संचार प्रणाली में एकरुपता के परिणामस्वरुप 'राष्ट्रीय संस्कृति' बनी और इसने राष्ट्रीय सीमाओं को मजबूत बनाया। इन सीमाओं के भीतर रहने वाले लोगों ने स्वयं को इन सीमाओं से जोड़ना शुरु कर दिया। सांस्कृतिक दृष्टि से भी इन लोगों ने खुद को समान व्यक्तियों की तरह और एक बड़े समुदाय का सदस्य समझना शुरु कर दिया। यानी अंग्रेजों ने खुद को दूसरों से भिन्न रुप में अंग्रेज होने की पहचान दे दी और इंग्लैंड की भौगोलिक सीमाओं का वासी समझकर उसके साथ स्वयं को जोड़ लिया। जर्मन और फ्रांसीसियों ने भी ऐसा ही किया। राष्ट्रीयता के विचार की यही शुरुआत थी।

आइए, हम इसे थोड़ा अलग तरीके से समझते हैं। राष्ट्रवाद, यूरोप में राष्ट्रों और राष्ट्र राज्यों (जो विशाल व सांस्कृतिक समनुरुप क्षेत्र होने के साथ–साथ राजनीतिक व्यवस्था में भी एक समान थे) के उद्भव का परिणाम था। ये राष्ट्र–राज्य हमेशा नहीं बने रहे। प्रारंभिक समाज, मानव संगठनों के सरल स्वरुप सहित और श्रम के किसी विस्तृत विभाजन के बगैर किसी राज्य या कानून और व्यवस्था लागू करने वाले किसी केन्द्रीय प्राधिकरण (अथॉरिटी) के बगैर भी अपने जीवन को व्यवस्थित और विनियमित कर सकते

थे। केन्द्रीय प्राधिकरण शक्ति (अथॉरिटी) के रुप में राज्य का अस्तित्व व्यवस्थित खेती–बाड़ी प्रारंभ होने के बाद ही अस्तित्व में आया। किसी केन्द्रीय सत्ता के अभाव में लोगों को आम तौर पर अपने जीवन को व्यवस्थित ढंग से व्यतीत करने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता था। औद्योगीकरण और आधुनिक विश्व अर्थ–व्यवस्था के प्रारंभ होने पर अनिवार्य रुप से राज्यों के होने की जरुरत और अधिक महसूस की गई। संचार की व्यापक प्रणाली और एक मानक भाषा पर केन्द्रित समनुरुप शिक्षा पद्धति ने सांस्कृतिक और राजनीतिक समानता की परिस्थितियां पैदा कीं। इस प्रकार आधुनिक राष्ट्र राज्य अस्तित्व में आए। इन राष्ट्र राज्यों को, अपने आपको निरंतर अस्तित्व में बनाए रखने के लिए, इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के सहयोग और वफादारी की आवश्यकता थी और यही राष्ट्रवाद की शुरुआत थी। अन्य शब्दों में कहें तो किसी राष्ट्र को राज्य के एक सीमा क्षेत्र में रहने वाले लोगों या समुदाय की विशिष्ट पहचान और इसकी उच्च संस्कृति ने ही उस राष्ट्रीयता की भावना को मूर्त रुप दिया।

परन्तु भारत में राष्ट्रवाद का विकास इस रुप में नहीं हुआ। जिस समय यूरोप में राष्ट्रवाद की जड़ें पनप रही थीं, उस समय भारत में परिस्थितियां बिल्कुल भिन्न थीं। यहां बहुत सीमित स्तर पर औद्योगीकरण अस्तित्व में आया। जब यूरोप में तेजी से औद्योगीकरण विकसित हो रहा था उस समय भारत की अर्थव्यवस्था अभी भी कृषि पर आधारित थी। अलग–अलग लोग भिन्न–भिन्न भाषाएँ बोलते थे। यद्यपि देश भक्ति की भावना (देश भक्ति : अपने क्षेत्र और संस्कृति के लिए प्यार और वफादारी की भावना, जो मराठवाड़ा के लिए मराठों में और राजपूताना के लिए राजपूतों में मौजूद थी) आधुनिक काल से पूर्व के समय में भारत में पहले ही मौजूद थी, परन्तु आज जिन अर्थों में हम राष्ट्रवाद का मतलब समझते हैं (प्रशासन की एकीकृत प्रणाली, सामान्य भाषा, उच्च कोटि की एक जैसी संस्कृति और राजनीतिक एकीकरण), उन अर्थों में इसका अस्तित्व 19वीं सदी के मध्य तक भारत में अस्तित्व में नहीं आया था।

बुनियादी तौर पर भारत में राष्ट्रीयता का विकास ब्रिटिश शासन के प्रत्युत्तर के रुप में अस्तित्व में आया। जैसा कि आप जानते हैं, भारत में ब्रिटिश शासन की शुरुआत 1757 में प्लासी के युद्ध के साथ हुई और यहां के स्थानीय शासकों को हराने के बाद धीरे–धीरे यहां ब्रिटिश शासन स्थापित हुआ। अंग्रेज़ों के शासक के रुप में आगमन का अनेक स्थानीय शासकों और लोगों ने विरोध किया था। वे सभी भारत में ब्रिटिशों की उपस्थिति का विरोध करना चाहते थे और उसके खिलाफ युद्ध करना चाहते थे। परन्तु प्रारंभ में उन्होंने यह विरोध मिलकर या एकजुट होकर नहीं किया। अलग–अलग लोगों को ब्रितानी लोगों से विशिष्ट या अलग–अलग शिकायतें थी और इसलिए वे अपनी विशेष तकलीफें दूर करने के लिए अंग्रेजों से लड़े। उदाहरण के लिए, स्थानीय शासक नहीं चाहते थे कि ब्रिटिश शासक उनके क्षेत्रों को हथिया लें (जैसा कि वर्तमान उत्तर प्रदेश के तत्कालीन अवध और झांसी के शासकों के साथ हुआ) इसी प्रकार किसान, कारीगर और जनजातीय लोग ब्रिटिशों के हाथों पीड़ित हुए और प्रायः अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह करते रहे। (इस संबंध में आप इस पुस्तक के मॉडयूल 3 में पढ़ चुके हैं) परन्तु ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सिर्फ विरोध करने या युद्ध करने से ही भारत में राष्ट्रीयता की भावना नहीं आई। यद्यपि जन सामान्य के विभिन्न वर्ग ब्रिटिशों के हाथों समान रुप से पीड़ित होने के कारण एकजुट हए, परन्तु इससे भी पूरे देश और इसके लोगों के साथ एक जैसी

आपकी टिप्पणियाँ

समानता की पहचान होने की भावना नहीं आई। यहां तक कि 1857 के भारी विद्रोह, जिसमें संपूर्ण जनसामान्य के अनेक वर्गों ने मिलकर युद्ध किया (जैसे स्थानीय शासक, सैनिक, जमींदार और किसान) परंतु इससे भी राष्ट्रीयता की भावना या अखिल भारतीय एकता विकसित नहीं हुई। भारत के लोगों में, परस्पर अनेक मतभेदों के बावजूद, अनेक ऐसी चीजें हैं जो सामान्य हैं, इस विचार ने अभी जड़ें नहीं पकड़ी थीं। इसी प्रकार यह अहसास भी अभी किसी को नहीं हुआ था कि ब्रिटिश शासन विदेशी और पराया शासन है, जो यह चाहता था कि सभी लोगों पर वह अपना अधिकार करके उन्हें अपने नियंत्रण के अधीन कर ले।

भारत में राष्ट्रीयता का या भारतीय राष्ट्रीयता का सार यही भावना थी कि सभी भारतीयों की एक सामान्य राष्ट्रीयता है और ब्रिटिश शासन का विरोध करना सामूहिक रुप से सभी के हित में है। साधारण शब्दों में कहें तो ब्रिटिश शासन का सामूहिक विरोध और राष्ट्रीय एकता को हासिल करने की इच्छा भारतीय राष्ट्रवाद की भावना के केन्द्र में निहित थी।

औपनिवेशक शासकों के आगमन, भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था में उनकी घुसपैठ, वास्तव में राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए बाहरी रुप से जिम्मेदार परिस्थितियां थीं। तथापि इन परिस्थितियों ने लोगों में राष्ट्रवाद संबंधी जागरुकता की भावना पैदा नहीं की। राष्ट्रीय भावना के विचार की चेतना को परिपक्व होने में बहुत लंबा समय लगा और सांस्कृतिक, अर्थव्यवस्था संबंधी और राजनीतिक क्षेत्रों में धीरे–धीरे यह विचार पनपने लगा। आगे हम इन विषयों पर इन अलग–अलग विचार करेंगे।

पाठगत प्रश्न 20.1

1. निम्नलिखित कथनों को पढ़कर सही या गलत बतलाएँ:

   (1) राष्ट्रवाद के विचार का इतिहास मानव इतिहास जितना प्राचीन है। (सही/गलत)

   (2) राष्ट्रवाद के विचार की जड़ें आधुनिक यूरोप के इतिहास में हैं। (सही/गलत)

   (3) राष्ट्रवाद, आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था का परिणाम था। (सही/गलत)

   (4) भारत में राष्ट्रवाद का अहसास 19वीं सदी के मध्य तक अस्तित्व में नहीं आया था। (सही/गलत)

2. ऐसे दो मुख्य मुद्दों का वर्णन करें जो भारतीय राष्ट्रवाद को समझने के लिए निर्णायक हैं।

20.2 संस्कृति और राष्ट्रवाद

राष्ट्रवाद के विचार की अभिव्यक्ति सबसे पहले सांस्कृतिक क्षेत्र में देखने में आई। ऐसा दो स्तरों पर हुआ। पहले तो यह पारंपरिक भारतीय संस्कृति के कुछ तत्वों के संबंध में

सवाल उठाने और भारतीय सभ्यता की कुछ सामाजिक बुराइयों जैसे जाति व्यवस्था, धार्मिक अंधविश्वास, पुरोहिताई, महिलाओं के प्रति भेदभाव इत्यादि को दूर करके सुधार लाने की इच्छा के कारण पैदा हुई। दूसरे, भारतीय सभ्यता में अंग्रेजों के हस्तक्षेप के विरोध का भी भारतीयों द्वारा प्रयास किया गया।

स्मरणीय बात यह है कि औपनिवेशिक विजय का अर्थ मात्र यही नहीं था कि एक प्रकार के शासकों के स्थान पर दूसरे प्रकार के शासकों का आ जाना। साधारण लोगों के जीवन पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश शासकों और उनके एजेंटो के प्रयासों से उस समय के औपनिवेशिक शासकों की संस्कृति भारतीयों में फैलने लगी। उपनिवेशवादी संस्कृति और भाषा के प्रसार का भारतीय उच्च कुलीन वर्गों में दो प्रकार से असर पड़ा (कुलीन इलीट : समाज की उच्च संस्कृति से संबद्ध सामाजिक विशेषाधिकार प्राप्त और समाज के उच्च वर्ग से संबंधित लोग)। उनमें से कुछ लोगों ने पारंपरिक भारतीय समाज और संस्कृति की तुलना आधुनिक इंग्लैंड में उस समय मौजूद संस्कृति के साथ करनी शुरु कर दी थी। इस प्रकार उन्होंने भारतीय संस्कृति के कुछ तत्वों के विरुद्ध प्रश्न किए। उदाहरण के लिए, राजा राम मोहन राय और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जैसे समाज सुधारकों ने कुछ ऐसी सामाजिक बुराइयों को दूर करने के प्रयास किए जो भारतीय समाज का हिस्सा थीं। विशेष रुप में राजा राममोहन राय ने सती प्रथा (पति की मृत्यु होने पर उसकी चिता के साथ उसकी विधवा का भी जला जाना) पर आपेक्ष किया और विद्यासागर ने विधवा के विवाह पर बल दिया। ज्योतिबा फुले जैसे नेताओं ने महाराष्ट्र में जातपात के विरुद्ध आंदोलन शुरु किया। उन्होंने उपनिवेशीय शासकों से भी अपील की कि वे भारतीय समाज में हस्तक्षेप करे और इसमें सुधार लाएँ यद्यपि उन्हें यह विश्वास नहीं था कि यूरोपीय संस्कृति, भारतीय संस्कृति से श्रेष्ठ है। परंतु उन्हें यह विश्वास अवश्य था कि ब्रिटिश शासन उस आधुनिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, जो भारतीय समाज में आधुनिकता के समानान्तर चलते हुए समुचित ढंग से विकास कर सकती है।

एक अन्य स्तर पर यद्यपि, भारतीय नेताओं ने भारतीय संस्कृति की रक्षा करने और इसे बचाने का प्रयास किया जिसके सोचने के पीछे उनकी यह धारणा है थी कि भारतीय लोगों के जीवन में उपनिवेशवादी संस्कृति अतिक्रमण कर रही हैं। 1850 के दशक में जब यूरोपीय वेशभूषा और उनकी प्रथाओं को भारतीयों पर जबरन लागू करने का प्रयास किया गया, तो उन्होंने इसका विरोध किया। दिलचस्प बात यह है कि यह उन सुधारकों के संबंध में भी सत्य है जिन्होंने यह स्वीकार किया था और यह आशा भी की थी कि ब्रिटिश शासन कानून द्वारा लागू करके अथवा अन्य उपायों से, भारत में आधुनिकता की शुरुआत करेंगे। जैसे 19वीं सदी के प्रख्यात सुधारक और ब्रह्मसमाज (1828 में राममोहन राय द्वारा गठित) के नेता, केशव चन्द्र सेन अंग्रेजी पोशाक पहनना और अंग्रेजी भोजन खाना पसंद नहीं करते थे। इसी प्रकार ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा आयोजित समारोह में भाग लेने से इंकार कर दिया था, क्योंकि उन्हें यूरोपीय पोशाक पहनने के लिए कहा गया था। इस दृष्टि से यह समझा जाता था कि लोगों के लिए सांस्कृतिक अधिकार और प्रथाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण थीं और उपनिवेशीय शासन का इस आधार पर विरोध किया गया कि यह एक प्रकार से उनकी संस्कृति पर अतिक्रमण करने का प्रयास है।

आपकी टिप्पणियाँ

ऊपर उल्लिखित दो दृष्टिकोण आपको दो नितान्त भिन्न और एक–दूसरे के विरोधी भी दिखाई दे सकते हैं। प्रथम दृष्टिकोण, (पारंपरिक भारतीय संस्कृति की बुराइयों के खिलाफ सवाल उठाना) तथा दूसरा दृष्टिकोण (उपनिवेशीय शासकों द्वारा स्थानीय भारतीय संस्कृति में दखल देने अथवा उसे बदलने के प्रयास का विरोध) प्रथम दृष्टि में परस्पर विरोधी लग सकते हैं। देखने में आपको ऐसा लग सकता है कि प्रथम दृष्टिकोण के मुताबिक भारतीय समाज में हस्तक्षेप करने के लिए ब्रिटिशों को आमंत्रित किया गया जबकि दूसरे दृष्टिकोण के अनुसार इसका विरोध किया गया। परन्तु इस बात को याद रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है कि भारतीय राष्ट्रवाद के घटकों के रुप में, ये दोनों दृष्टिकोण एक–दूसरे के पूरक थे। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का विचार, जैसा कि यह 19वीं सदी में इस आधार पर विकसित हुआ कि पारंपरिक भारतीय संस्कृति की कुछेक बुराइयों को औपनिवेशीय शासकों द्वारा, या उनकी संस्कृति के साथ इसका एकाकार करके सख्ती से नकारा जाए, अन्य शब्दों में 19वीं सदी के समाज सुधारक भारतीय संस्कृति को वास्तव में आधुनिक बनाना चाहते थे, परन्तु वे इसे पूरी तरह पश्चिमी रुप में नहीं ढलने देना चाहते थे। यानी वे अपनी पारंपरिक संस्कृति चाहते थे। इसका अभिप्राय यह हुआ कि उन्होंने पारंपरिक संस्कृति के साथ–साथ आधुनिक औपनिवेशिक संस्कृति का भी विरोध किया। 19वीं सदी में भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद जिस रुप में प्रचलित था उसका यही संक्षिप्त सार है।

पाठगत प्रश्न 20.2

1. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें :

   (i) उस सुधारक का नाम बताएँ, जिसने सती प्रथा का विरोध किया।

   _____

   (ii) विधवा विवाह पर किस भारतीय सुधारक ने बल दिया?

   _____

   (iii) राममोहन राय द्वारा स्थापित संगठन का नाम बताएँ।

   _____

2. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की दो मुख्य विशेषताएं बताएँ।

   _____

20.3 आर्थिक राष्ट्रवाद

अब आप समझ गए होंगे कि सांस्कृतिक राष्ट्रीयता से क्या अभिप्राय है और भारत की संस्कृति और राष्ट्रवाद में परस्पर क्या संबंध था। आइए, अब हम आर्थिक राष्ट्रवाद को समझने का प्रयास करें। आर्थिक राष्ट्रवाद की जड़ों को हम 19वीं सदी के द्वितीय अर्ध–शतक के काल में ढूंढ सकते हैं जब दादाभाई नौरौजी, महादेव गोविंद रानाडे और रोमेश चन्द्र दत्त और अनेक अन्य लोगों ने यह अनुभव करना प्रारंभ किया था कि ब्रिटिश

शासन भारत का आर्थिक रुप से शोषण कर रहा था और भारत को अत्यन्त निर्धन स्थिति में रखने के लिए मुख्यतया वही जिम्मेदार था। इसीलिए गोपालकृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, जी वी जोशी और अनेक अन्य भारतीय नेताओं ने, ब्रिटिश शासन की आर्थिक व्यवस्था की आलोचना करने के लिए भली–भांति व्यवस्थित और समेकित आलोचना पद्धति विकसित की। उनके द्वारा अपने लेखों के माध्यम से प्रतिपादित और प्रचारित आर्थिक राष्ट्रवाद की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

उन्होंने इस बात पर बल दिया कि औपनिवेशिक शासन अनेक प्रकार से भारत का आर्थिक रुप से शोषण कर रहा था। शुरु में यह शोषण किसानों पर लगाये गए भारी करों और भारत के साथ असमान व्यापार तक ही सीमित था। यह असमान व्यापार था क्योंकि ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी (जिसे ब्रिटिश संसद ने भारत के साथ व्यापार करने का एकाधिकार दिया था) बहुत सस्ते दामों पर भारतीय सामान खरीदती थी और ब्रिटेन में निर्मित वस्तुओं को बहुत ही महंगे दामों पर भारत में बेचती थी। इसके परिणामस्वरुप भारत की धन–दौलत इंग्लैंड जाने लगी। इसने भारत के परंपरागत हस्तशिल्प उद्योगों को भी नष्ट कर दिया। तथापि, 19वीं सदी में, जबकि इस प्रकार का आर्थिक शोषण जारी था, नए जटिल प्रकार के शोषण के रुप अस्तित्व में आ गए। अब औपनिवेशिक शासकों ने भारत को अपने उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति करने वाले आपूर्तिकर्ता के रुप में शोषित करना शुरु कर दिया और एक ऐसे बाजार में बदल दिया जहां ब्रिटिश उद्योगों में निर्मित वस्तुओं को बेचा जा सके। भारत को ऐसी सामग्री की फसलें उगाने (जैसे कपास या पटसन) के लिए मजबूर किया जाने लगा जो ब्रिटिश उद्योगों के लिए आवश्यक थीं। इसका प्रभाव यह हुआ कि जो भारतीय धन–सम्पदा भारत के औद्योगीकरण और आर्थिक विकास के लिए प्रयोग में लाई जा सकती थी, ब्रिटेन के आर्थिक विकास के लिए प्रयोग में लाई गई। भारतीय राष्ट्रीय नेताओं ने इन महत्त्वपूर्ण तथ्यों को जाना और साथ ही इनका प्रचार भी किया।

भारत के लगातार आर्थिक शोषण को समझने के एक अंग के रुप में राष्ट्रीय नेता, विशेष रुप से दादाभाई नारौजी 'निष्कासन सिद्धान्त' को विचार के लिए सामने लाए। नारौजी ने, अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पावर्टी एंड द् अन–ब्रिटिश रुल इन इंडिया' (1901 में लिखित और 1988 में प्रकाशित) में यह तर्क दिया कि भारत के आर्थिक संसाधनों को व्यापार, औद्योगीकरण और ब्रिटिश अधिकारियों को दिए जाने वाले अति उच्च वेतन, जो भारतीय खज़ाने से अदा किए जा रहे थे, के जरिये बहुत व्यवस्थित पद्धति से इंग्लैंड को प्रदान किया जा रहा है। उनके आकलन के अनुसार धन के निष्कासन की यह मात्रा सरकारी लगान का आधा हिस्सा और भारत की कुल बचत के एक तिहाई हिस्से के बराबर थी। इस प्रकार ब्रिटेन के धनी बनने और भारत को निर्धन बनाने की प्रक्रिया साथ–साथ चल रही थी।

इस प्रकार प्रारंभिक राष्ट्रीय नेताओं ने यह तर्क दिया कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने, अनेक प्रकार के उपायों के जरिए भारत की अर्थव्यवस्था को पूरी तरह से ग्रेट ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था के अधीन कर लिया था। उनके विचार में भारत की अर्थव्यवस्था की समस्त दिशा को ब्रिटिश अर्थव्यवस्था की जरुरतों के अनुसार मोड़ा जा रहा था। उन्होंने यह मांग की कि भारत की धन–सम्पदा का इंग्लैंड को निष्कासन बंद किया जाए और भारत की पूंजी से ही भारत में औद्योगीकरण लाया जाए, ताकि इससे भारत और भारत के लोगों

आपकी टिप्पणियाँ

दोनों का हित हो सके। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रवादी नेताओं ने अपने देश के लिए स्व–शासन या स्व–सरकार या कहें स्वराज की मांग की।

राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा संरचित आर्थिक राष्ट्रीयवाद का संदर्भ द्विपक्षीय था :

सबसे पहले तो इससे इस धारणा को खत्म किया गया, जो 19वीं सदी की प्रथम अर्द्ध शती के दौरान शिक्षित वर्ग के दिल में बैठ गई थी कि ब्रिटिश उपनिवेशवादी सरकार कल्याणकारी सरकार है और इससे अन्त में भारत का आर्थिक विकास होगा। अनेक लोगों को यह विश्वास था कि यदि औपनिवेशिक शासन लंबी अवधि तक चलेगा तो, अन्त में, भारत ग्रेट ब्रिटेन की तरह समृद्ध राष्ट्र बन जाएगा। भारतीय राष्ट्रवादी नेता यह प्रदर्शित करने में समर्थ थे कि यह धारणा गलत थी और यह कि उपनिवेशवादी शासन वास्तव में भारत के लोगों के हितों के लिए हानिकारक था।

दूसरे, आर्थिक राष्ट्रवाद ने ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन के विरुद्ध एक शक्तिशाली आंदोलन की नींव रखी, जो 20वीं सदी में महात्मा गांधी और अन्य नेताओं के नेतृत्व में प्रारंभ हुआ। इन नेताओं ने आर्थिक राष्ट्रवाद के विचारों को भारतीय जनता तक पहुंचाया और उन्हें इसके पक्ष में राष्ट्रीय आंदोलन के लिए प्रेरित किया। एक बार भारतीय जनमानस के विशाल संख्या में राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जुड़ते ही, ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का भारत में रहना असंभव हो गया।

पाठगत प्रश्न 20.3

1. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें :

   (i) भारत के कुछ ऐसे नेताओं के नाम लिखें जिन्होंने यह तर्क दिया कि ब्रिटिश शासन द्वारा भारत की अर्थव्यवस्था का शोषण किया जा रहा था।

   _____

   (ii) निष्कासन सिद्धांत क्या था और इसे किसने प्रतिपादित किया?

   _____

   (iii) आर्थिक राष्ट्रवाद का क्या महत्व है?

   _____

   (iv) 20वीं सदी के राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं द्वारा आर्थिक राष्ट्रवाद के विचार का किस प्रकार उपयोग किया गया?

   _____

2. रिक्त स्थान भरें :

   (i) ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत के साथ _____ किया।

   (ii) दादाभाई नौरोजी ने _____ पुस्तक लिखी।

   (iii) भारत से इंग्लैंड को निष्कासित की जाने वाली धन–सम्पदा की कुल मात्रा भारत की _____ बचत के बराबर थी।

(iv) उपनिवेशवादी शासकों ने अपने उद्योगों के लिए भारत को _____ के स्रोत के रुप में शोषित किया।

20.4 धर्म और राष्ट्रवाद

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और आर्थिक राष्ट्रवाद के अतिरिक्त, अन्य उपाय भी थे जिनके माध्यम से भारतीय राष्ट्रवाद की भावना अभिव्यक्त की जा रही थी। 19वीं सदी की दूसरी अर्ध शती के दौरान भारतीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में यह विचार अस्तित्व में आया जो धर्म पर आधारित था। यह बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय, दयानंद सरस्वती (जिन्होंने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की) और अरबिन्दो घोष जैसे नेताओं ने हिन्दू धर्म और इसकी भावना को भारतीय राष्ट्रवाद के पीछे की प्रेरक शक्ति बना दिया। उन्होंने भारत में ब्रिटिशों की उपस्थिति को पश्चिमी सभ्यता द्वारा भारत की सभ्यता पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के रुप में देखा। वे इस प्रभुत्व के पूरी तरह विरुद्ध थे।

ये नेता पूरी तरह यह मानते थे कि यद्यपि ब्रिटिश, भारत पर विजय प्राप्त करने में सफल रहे परन्तु पूर्वी सभ्यता पश्चिमी सभ्यता से श्रेष्ठ थी। बंकिम चन्द्र ने यह तर्क दिया कि यद्यपि ब्रिटिशों ने सेना और प्रौद्योगिकी की श्रेष्ठता की सहायता से भारत पर विजय प्राप्त कर ली थी, परन्तु भारतीयों को इसका अंधानुकरण नहीं करना चाहिए। उन्होंने भारतीय समाज की अद्वितीयता का पक्ष लिया और कहा कि इस पर पश्चिमी सभ्यता के विचारों को लागू नहीं किया जा सकता। इन नेताओं ने यह समझ लिया था कि पश्चिमी सभ्यता व्यक्तिवादी विचारधाराओं (आध्यात्मिकता के स्थान पर) पर आधारित थी और यह विचार भारत के लिए पूरी तरह अनुचित था। विवेकानंद का विश्वास था कि पश्चिमी विचारों को भारतीय परिस्थितियों के अनुसार पुनः रचित करना होगा। उन्होंने कहा, "यूरोप में राजनीतिक विचार राष्ट्रीय एकता लाते हैं एशिया में धार्मिक विचार राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा करते हैं।"

इन नेताओं का प्रेरणा स्रोत पश्चिमी साहित्य और अन्य साधन नहीं बल्कि वेद, उपनिषद और गीता जैसे भारतीय ग्रंथ थे। उन्होंने ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन की आलोचना की, जिसका मुख्य आधार था कि यह लोग आध्यात्मिक संसाधनों से संपन्न समृद्ध भारत भूमि पर एक घटिया भौतिक पद्धति लागू करना चाहते हैं।

धर्म पर आधारित राष्ट्रवाद की इस समझ का राजनीतिक पक्ष भी था। बालगगाधर तिलक जैसे नेता राष्ट्रवाद की इस भावना को जनमानस तक ले जाना चाहते थे। वे जानते थे कि भारतीय समाज में धर्म बहुत महत्त्वपूर्ण नैतिक शक्ति था। अतः उन्होंने राष्ट्रवादी भावना के प्रचार के लिए धर्म का इस्तेमाल करने का निर्णय लिया। लोगों से वे उन्हीं की भाषा, यानी धार्मिक भाषा में बात करने के योग्य हो सकें इसके लिए तिलक ने 1893 में महाराष्ट्र में 'गणपति उत्सव' मनाने की शुरुआत की ताकि ऐसा मंच तैयार किया जा सके जहां से राष्ट्रवादी विचारों का प्रचार और प्रसार किया जा सके।

20वीं सदी के दौरान, धर्म पर आधारित इस राष्ट्रवादी समझ के परिणामस्वरुप, दो विभिन्न किस्म की राजनीतिक गतिविधियां पैदा हुई। एक तरफ, महात्मा गांधी जैसे नेताओं ने राष्ट्रवादी प्रेरणा को गति देने के लिए धर्म के इस्तेमाल का स्वागत किया। परन्तु उन्होंने इस दृष्टिकोण को केवल हिन्दू धर्म तक सीमित नहीं रखा। उन्होंने हिन्दुत्व,

आपकी टिप्पणियाँ

इस्लाम और अन्य धर्मों के प्रतीकों और भाषाओं का भी इस्तेमाल किया। इस प्रकार उन्होंने विभिन्न धार्मिक समुदायों के सदस्यों को राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जोड़ने और उनमें एकता की भावना पैदा करने का प्रयास किया।

दूसरा दृष्टिकोण विशिष्ट प्रकृति का था और यह 'हिन्दू महासभा' और 'मुस्लिम लीग' जैसे संगठनों की गतिविधियों में लक्षित होता था। 'हिन्दू महासभा' के नेताओं ने स्वयं की गतिविधियों को हिन्दुओं तक और 'मुस्लिम लीग' ने मुसलमानों तक सीमित रखा। उन्होंने भारतीय जनमानस में एकता के प्रयास करके या ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन के लगातार विरोध द्वारा, किसी भी तरह से भारतीय राष्ट्रवाद की विचारधारा के लिए योगदान नहीं किया।

अंत में, आपके लिए यह समझना बहुत महत्त्वपूर्ण है कि विभिन्न प्रकार के राष्ट्रवाद के परस्पर संबंधों के कौन–कौन से पक्ष हैं, जो आपने इस मॉड्यूल में पढ़े हैं। यद्यपि देखने में वे एक–दूसरे से भिन्न दिखाई देते हैं परन्तु असल में उनमें बहुत सी बातें सामान्य थी। वे एक दूसरे से सिर्फ इस सीमा तक भिन्न थे कि उन्होंने एक ही लक्ष्य तक पहुंचने के लिए अलग–अलग रास्तों को अपनाया। वे किसी भी मूलभूत भावना में परस्पर विरोधी नहीं थे। उन सभी ने ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन का विरोध किया परन्तु उनके विरोध के आधार भिन्न–भिन्न थे। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के पक्षधरों का विश्वास था कि औपनिवेशिक शासन ने भारतीय संस्कृति का अतिक्रमण करना शुरु कर दिया था जिसका विरोध किया जाना चाहिए। आर्थिक राष्ट्रवाद के प्रतिपादकों ने तर्क दिया कि उपनिवेशवादी शासक आर्थिक रुप में भारत का शोषण कर रहे थे और भारत को पिछड़ा बनाए रखने में यह एक मुख्य घटक था। इसी प्रकार बंकिम चंद्र और विवेकानंद जैसे नेताओं ने ब्रिटिश शासन का इस आधार पर विरोध किया कि यह भारत के आध्यात्मिक संसाधनों को प्रदूषित कर रहा था। इन तीनों के उपनिवेशवादी शासन के विरुद्ध होने का कारण था भारतीय जनमानस पर पड़ रहा उस शासन का प्रभाव। उनके विचारों ने 20वीं सदी के दौरान उपनिवेशवाद–विरोध शक्तिशाली भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की भूमिका तैयार करने में सहयोग दिया, जिसने अंततः भारत से उपनिवेशवादी शासन को पराजित किया और भारत से बाहर निकाल फेंका।

पाठगत प्रश्न 20.4

1. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें :

   (i) आर्य समाज की स्थापना किसने की?

   _____

   (ii) भारतीय नेताओं के अनुसार, पश्चिमी सभ्यता के कौन से मुख्य विचार थे?

   _____

   (iii) उस भारतीय नेता का नाम लिखें, जिसने भारतीय जनमानस तक पहुंचने के लिए गणेश उत्सव मनाने की शुरुआत की।

   _____

2. निम्नलिखित कथनों को पढ़कर सही या गलत बतलाएँ :

(i) बंकिम चन्द्र ने अनुभव किया कि पश्चिमी सभ्यता के विचारों को भारत में लागू किया जा सकता है। (सही/गलत)

(ii) दयानंद और विवेकानंद जैसे नेताओं ने अपनी प्रेरणा यूरोपीय ग्रंथों (साहित्य) से प्राप्त की। (सही/गलत)

(iii) आर्थिक राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और धर्म पर आधारित राष्ट्रवाद ने एक ही लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विभिन्न मार्गों को अपनाया। (सही/गलत)

आपने क्या सीखा

इस पाठ में निम्नलिखित मुद्दे उल्लेखनीय हैं :

- सर्वप्रथम 19वीं सदी में यूरोप में राष्ट्रवाद की जड़ें पनपीं और यह तेजी से हुए औद्योगीकरण और आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था का परिणाम था।
- भारतीय राष्ट्रवाद अपने समकालीन यूरोप के राष्ट्रवाद से नितान्त भिन्न था। भारत में राष्ट्रवाद की भावना का उदय 19वीं सदी के उत्तरार्ध के दौरान हुआ।
- भारतीय राष्ट्रवाद का विचार दोहरे विरोध की भावना पर आधारित था। एक था, ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन का विरोध और दूसरा था, भारत के लोगों की एकता।
- ब्रिटिश शासन का प्रभाव सर्वप्रथम संस्कृति के क्षेत्र में अनुभव किया गया। भारतीय नेताओं द्वारा तर्क दिया गया कि भारतीय संस्कृति में उपनिवेशवादी संस्कृति का अतिक्रमण हानिकारक है और इसका विरोध किया जाना चाहिए।
- प्रारंभिक राष्ट्रवादी नेताओं ने ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन की आर्थिक दृष्टि से शोषणकारी प्रकृति की ओर इशारा किया और इस प्रकार आर्थिक राष्ट्रवाद का जन्म हुआ।
- इसके साथ–साथ, अनेक अन्य नेताओं ने भारतीय राष्ट्रवाद का प्रचार किया, जो धर्म पर आधारित था और जो धार्मिक विचार–विमर्श द्वारा प्रेरित था।
- 20वीं सदी के दौरान, अनेक शाखाओं सहित जिस भारतीय राष्ट्रवाद का विकास हुआ उसी के परिणामस्वरुप शक्तिशाली भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन रुप ले सका। यह भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन 19वीं सदी के भारतीय राष्ट्रवाद के विचार पर आधारित था और इसे जनमानस की व्यापक भागीदारी द्वारा समर्थन मिला। विशाल जनमानस की सक्रिय भागीदारी ने भारतीय राष्ट्रवाद को शक्तिशाली अजेय बल में बदल दिया, जिसने अंत में ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन को भारत से वापस जाने पर मजबूर कर दिया।

आपकी टिप्पणियाँ

पाठांत प्रश्न

1. औद्योगीकरण ने यूरोप में राष्ट्रवाद को विकसित करने में किस प्रकार दिशा दी?
2. भारतीय राष्ट्रवाद, अपने यूरोपीय समकालिक राष्ट्रवाद से किस प्रकार भिन्न था?
3. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का सार क्या था?
4. दादाभाई नारौजी और आर. सी. दत्त जैसे नेताओं ने आर्थिक राष्ट्रवाद के विकास में किस प्रकार योगदान किया?
5. वे कौन–से विभिन्न उपाय थे जिनके द्वारा ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को ग्रेट ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था के अधीन किया?
6. दयानंद सरस्वती, विवेकानंद और अरबिन्दो घोष के दृष्टिकोण से धर्म और राष्ट्रीयता में परस्पर क्या संबंध था?
7. भारतीय राष्ट्रवाद के विकास का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विकास से क्या संबंध था?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

20.1

1. (क) गलत, (ख) सही, (ग) सही, (घ) सही
2. (क) ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन का विरोध और (ख) भारतीय लोगों की एकता।

20.2

1. (क) राममोहन राय, (ख) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, (ग) ब्रह्म समाज
2. पारंपरिक भारतीय संस्कृति के कुछ तत्वों का विरोध और लोगों के जीवन में उपनिवेशवादी संस्कृति के अतिक्रमण का विरोध।

20.3

1. दादाभाई नारौजी, आर. सी. दत्त, महादेव गोविंद रानाडे और कुछ अन्य।
2. निष्कासन पद्धति का अभिप्राय था व्यापार, उद्योग और भारत में नियुक्त ब्रिटिश अधिकारियों के वेतनों के जरिये भारतीय धन–सम्पदा को एक प्रणाली का रुप देकर इंग्लैंड में स्थानांतरित करना।
3. आर्थिक राष्ट्रवाद का यह महत्व था कि इससे यह भ्रम समाप्त हो गया कि ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन भारत के लोगों की भलाई के लिए काम कर रहा था।
4. आर्थिक राष्ट्रवाद की भावनाओं का, राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं ने, भारतीय लोगों को ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रेरित करने के लिए उपयोग किया।

2. (क) असमान व्यापार, (ख) निर्धनता और भारत में ब्रिटिशों के शासन को हटाना (ग) एक तिहाई, (घ) कच्चा माल

20.4

1. (क) दयानंद सरस्वती, (ख) व्यक्तिवाद, धर्मनिरपेक्षता, औचित्यपूर्ण व्याख्या, (ग) बाल गंगाधर तिलक
2. (क) गलत, (ख) गलत, (ग) सही

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. देखें 20.1, अनुच्छेद 2
2. देखें 20.1, अनुच्छेद 5
3. देखें 20.2
4. देखें 20.3, अनुच्छेद 1 व 2
5. देखें 20.3, अनुच्छेद 3 व 4
6. देखें 20.4, अनुच्छेद 1 व 2
7. देखें 20.4, अनुच्छेद 7 (अंतिम अनुच्छेद)